परन्तु भगवद्गीता के इस श्लोक में वर्णित शान्ति-लाभ की यथार्थ-विधि को वे नहीं जानते। भगवान् श्रीकृष्ण सम्पूर्ण मानवीय क्रियाओं के भोक्ता हैं—यह ज्ञान परम-शान्ति का सरल मार्ग है। इसके अतिरिक्त, वे ही सम्पूर्ण लोकों तथा उनमें स्थित देवताओं के परमेश्वर हैं। इसलिए मनुष्यों को चाहिए कि अपना सर्वस्व उन्हीं की दिव्य सेवा में समर्पित कर दें। उनसे श्रेष्ठ अन्य कोई तत्त्व नहीं। वे देवाधिदेव शिव-ब्रह्मा आदि से भी महान् हैं। वेदों में परमेश्वर श्रीकृष्ण का यह वर्णन है: **तमीश्वराणां परमं महेश्वरम्** माया-मोहवश जहाँ दृष्टि जाती है, जीव वहीं अपना प्रभुत्व करने का प्रयास कर रहे हैं, परन्तु वास्तव में वे सब भगवान् की माया के आधीन हैं। भगवान् श्रीकृष्ण माया के स्वामी हैं, जबकि जीव माया कठोर नियमों के परवश हैं। इस नितान्त सत्य को जाने बिना व्यक्तिगत अथवा संयुक्त रूप से भी संसार में शान्ति की उपलब्धि कभी नहीं हो सकती। कृष्णभावनामृत का भाव यह है: भगवान् श्रीकृष्ण परमेश्वर हैं, और देवताओं सहित सारे जीव उनके अनुचर हैं। इस पूर्ण कृष्णभावनामृत में ही शान्ति की प्राप्ति हो सकती है।

पाँचवें अध्याय में कृष्णभावनामृत का व्यावहारिक (क्रियात्मक) निरूपण है, जेसे सामान्यतः कर्मयोग कहा जाता है। कर्मयोग मुक्तिकारक कैसे हो सकता है?—इस मनोधर्मप्रेरित प्रश्न का उत्तर यहाँ दिया गया है। कृष्णभावनाभावित कर्म करना इस पूर्ण ज्ञान से युवत होकर कर्म करना है कि श्रीकृष्ण परम ईश्वर हैं। ऐसे कर्म में और ज्ञान में भेद नहीं है। कृष्णभावनामृत साक्षात् भवितयोग है, जबकि ज्ञानयोग भक्तियोग की प्राप्ति का केवल एक पथ है। कृष्णभावनामृत का अर्थ परमसत्य से अपने सम्बन्ध के पूर्ण ज्ञान के साथ कर्म करना है; इस भावना की पूर्णता भगवान् श्रीकृष्ण को पूर्ण रूप से जानने में है। शुद्ध आत्मा भगवान् के भिन्न-अंश के रूप में उनका नित्य दास है। माया पर प्रभुत्व की इच्छा के कारण ही वह माया के संसर्ग में आता है। यही उसे प्राप्त होने वाले नाना दुःखों का कारण भी है। जब तक वह प्रकृति के संसर्ग में रहता है, तब तक प्राकृत आवश्यकता के अनुसार कर्म करने के लिए बाध्य है। किन्तु कृष्णभावनामृत की यह विशेषता है कि जड प्रकृति की परिधि में स्थित जीव को भी वह दिव्य जीवन प्रदान कर सकती है, क्योंकि प्राकृत-जगत् में भक्ति का अभ्यास करने पर जीव का दिव्य स्वरूप पुनः उद्भावित हो जाता है। भक्ति में उत्तरोत्तर प्रगति करने के अनुपात में प्रकृति-बन्धन से मुक्ति होती जाती है। श्रीभगवान् किसी जीव से पक्षपात नहीं करते। सब कुछ इन्द्रियनिग्रह और काम-क्रोध का दमन करने के लिए किए गए व्यावहारिक कर्तव्य-पालन पर निर्भर करता है। इन विकारों को निगृहीत कर कृष्णभावनामृत को प्राप्त हो जाने वाला वास्तव में शुद्ध सत्त्व, ब्रह्मनिर्वाण में परिनिष्ठित हो जाता है अष्टांगयोग का अन्तिम लक्ष्य कृष्णभावना को प्राप्त करना ही है। अतएव साक्षात् कृष्णभावनामृत में अष्टांगयोग का अभ्यास अपने-आप हो जाता है। यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान तथा समाधि के अभ्यास द्वारा धीरे-धीरे प्रगति हो सकती है।